



शान्ति और समन्वय का पथ :

# न य वा द

[ मुनीश्री नथमलजी ]

प्रकाशक :

आदर्श साहित्य संघ

प्रकाशक  
आदर्श साहित्य संघ  
नरदारशहर ( राबस्थान )

अथमावृत्ति २५ •  
कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा  
सम्बत् २०१३  
मूल्य ६)

मुद्रक  
धनलाल परडिया  
रेफिन आर्ट प्रेस  
( आदर्श साहित्य संघ द्वारा संचालित )  
३१ बडनग स्ट्रीट कन्नकता—७

स्याद्वादाय नमस्तस्मै, य विना सर्वथा क्रिया ।

लोकद्वितयभाविन्यो नैव साङ्गत्यभासते ॥

जिसकी गरण लिये बिना लौकिक और लोकोत्तर दोनों प्रकार की क्रियाएँ सम्भव (सगन) नहीं होती उस स्याद्वाद को नमस्कार है।

जेज विजा लोकास्त वि, वचहारो स चहा ण णिघट्टइ ।

तस्स भुवणेकगुरुणो, णमो जणेगंतवायस्स ॥

जिसके बिना लोक-व्यवहार भी सगन नहीं होगा, उस जगद्गुरु अनेकान्तवाद को नमस्कार है।

उत्पन्न दधिभावेन, नष्ट दुग्धतया पय ।

गोरसत्वात् स्थिर जानन्, स्याद्वादद्विद् जनोऽपि क ॥

दही बनना है, दूध मिट्टा है गोरस स्थिर रहना है। उत्पाद और विनाश के पौर्वापय में भी जो अपूर्वापर है, परिवर्तन में भी जो अपरिवर्तित है, इसे कौन भलीकार करेगा।

एकेनाकर्षन्ती श्लथयन्ती वस्तुनस्वमितरेण ।

अन्तेन जयति जैनी नीतिर्मन्थाननेत्रमिव गोपी ॥

एक प्रधान होता है, दूसरा गौप हो जाता है—यह जैन-दर्शन का नय है।

इस सापेक्ष नीति से सत्य उपलब्ध होता है। नबनीत तब भिन्नता है जब एक हाथ आगे बढ़ता है और दूसरा हाथ पीछे सरक जाता है।

## प्रकाशकीय

जीवन के सूक्ष्म और मार्मिक विश्लेषण में भारतीय तत्त्व ज्ञान जिस गहराई तक पहुँचा, विश्व-ज्ञान के इतिहास में उसका अनुपम स्थान है।

भारतीय तत्त्व-ज्ञान के विशद विकास में जैन मनीषियों और तत्त्व द्रष्टाओं ने जो अमर देन दी, वस्तु-तत्त्व के बहुमुखी विवेचन का जो सापेक्ष दृष्टिकोण उन्होंने दिया, यदि लोग उसे समझें, हृदयगम करें तो आज के समस्या संपन्न और अशांतिपूर्ण लोक जीवन में समता समन्वय और शान्ति की सुरमरी प्रवाहित हो सकती है।

जैन-ज्ञान का नयवाद दार्शनिक चिन्तन की एक अनूठी प्रक्रिया है, जो विभिन्न नवीं से वस्तु के निरूपण का पथ बताता हुआ भेद में अभेद और विदमता में समता के समन्वय की दृष्टि देता है।

प्रस्तुत पुस्तिका 'शांति और समन्वय का साग—नयवाद' आचार्यश्री तुलसी क. विद्वान् अन्तेवासी मुनिश्री नयमलत्री के गम्भीर चिन्तन का प्रतिरूप है, जिसमें उन्होंने नयवाद के दार्शनिक पहलुओं के साथ आज की राजनैतिक शक्तियों का तुलनात्मक विवेचन करते हुये शांति और समन्वय का एक व्यावहारिक हल प्रस्तुत किया है।

'आदर्श साहित्य संघ' की ओर से इस महत्त्वपूर्ण साहित्यिक पुस्तिका का प्रकाशन करते हुये हम हार्दिक प्रशंसा अनुभव करते हैं। आशा है, पाठक इसके लाभान्वित होंगे।

—जयचन्दलाल दफ्तरी (व्यवस्थापक)

## विषयानुक्रम

विषय	पृष्ठ संख्या
१—बस्तु-सत्य	१
२—व्यवहार सत्य	३
३—व्यक्ति और समुदाय	५
४—अन्तर्राष्ट्रीय निरपेक्षता	७
५—एकान्तिक आग्रह	१०
६—समन्वय की दिशा में प्रगति	१२
७—पंच कील	१४
८—साम्प्रदायिक साक्षेभता	१८
९—सामग्र्यत्व का आधार मध्यम मार्ग ही हो सकता है	१९
१०—शान्ति और समन्वय	२०
११—सह-अस्तित्व की धारा	२२
१२—सह-अस्तित्व का आधार—सयम	२४
१३—स्वत्व की मर्यादा	२६
१४—निष्पत्ति	२८



## वस्तु सत्य

यह विश्व समस्याओं का समुदाय है। उनका मूल समष्टि है।

रस्मी का एक ही सिरा होना तो गठ नहीं होनी। मनुष्य अकेला ही होना तो इन्द्र नहीं होना। शिर पर एक ही बाल होना तो जटिलता नहीं होनी। एक ही मस्तिष्क होना तो मर्त्य नहीं होते।

ये अलग-अलग लक्षणों और चिनगारियों बहूना के परिणाम हैं।

यह विश्वाकाश बहूना और एकता के चांद-सूरज से मुका हुआ है।

यह हमारा सत्य बहूना की अनभिव्यक्ति में एकता की स्पष्ट व्यञ्जना है।

अमावस की रात एकता की अनभिव्यक्ति में बहूना की स्पष्ट व्यञ्जना है।

पूर्णता की रात व्यक्ति और समष्टि का सुन्दर समन्वय है।

व्यक्ति और समष्टि का सगम मिटनेवाला नहीं है। व्यक्ति भी सत्य है,

समष्टि भी सत्य है। सत्य को मिटाया नहीं जा सकता।

भगवान् महावीर ने कहा—जो है उसे मिटाने की मन सोचो।

तुम्हारा अस्तित्व तुम्हें प्यारा है उनका अस्तित्व उत प्यारा है। जो नहीं है, उसे बनाने की



दोरी को इस प्रकार खींचो कि गाँठ न पड़े। मनुष्य को इस प्रकार चलाओ कि लड़ाई न हो। बाली को इस प्रकार सँभारो कि उलम्बन न बने। विचारों को इस प्रकार ढालो कि भिड़त न हो। तात्पर्य की भाषा में—आरोप और आक्रमण की नीति मन बरता। उससे गाँठ घुलनी है युद्ध द्विजित है बाल उलम्बत है और धिनगारियाँ उड़लनी हैं।

भगवान् ने कहा—आरोप नीति के पीछे यथाथ दृष्टिकोण और तटस्थ भाव नहीं होना इसलिए वह आपद्, दुःख और एकान्त की नीति है। आरोप को छोड़ो, सत्य उन्नत आणगा।

भगवान् ने कहा—एक ओर यह अखण्ड विश्व की भविष्यत सत्ता है और दूसरी ओर यह खण्ड का चरम रूप व्यक्ति है।

व्यक्ति का आरोप करनेवाला सत्ता और सत्ता का आरोप करनेवाला व्यक्ति—दोनों भटने हुए हैं। सत्ता का स्व व्यक्ति है। व्यक्ति की विशाल श्रद्धा सत्ता है। सापेक्षता में दोनों का रूप निखर उठता है।

यह व्यक्ति और समष्टि की सापेक्ष नीति नैन दशन का नय है। इससे अजुहार समष्टि सापेक्ष व्यक्ति और व्यक्ति सापेक्ष समष्टि—दोनों सत्य हैं। समष्टि निरपेक्ष व्यक्ति और व्यक्ति निरपेक्ष समष्टि—दोनों निरपेक्ष हैं।

## व्यवहार-मूल्य

नये बाद ध्वज सत्य की अपरिहाय व्याख्या है। वह जितना दार्शनिक सत्य है उतना ही व्यवहार सत्य है। हमारा जीवन वैयक्तिक भी है और सामुदायिक भी। इन दोनों कल्पों में नये की महत्ता है।

सापेक्ष नीति से व्यवहार में सामंजस्य आता है। उसका परिणाम है मैत्री, शान्ति और व्यवस्था। निरपेक्ष नीति अकहेलना, तिरस्कार और घृणा पैदा करती है। परिवार, जाति, गाँव, राज्य राष्ट्र और विश्व—ये क्रमिक विकासशील संगठन हैं। संगठन का मूल्य है सापेक्षता। सापेक्षता का नियम जो दो के लिए है, वही अन्तर्राष्ट्रीय जगत के लिए है।

एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की अकहेलना कर अपना प्रमुख साधना है, वही असमंजसता खड़ी हो जाती है। उसका परिणाम है—कटुता संपर्क और अशान्ति।

निरपेक्षता के पाँच रूप बनते हैं —

१—वैयक्तिक,

२—सामाजिक,

दोरी को इस प्रकार खींचें कि गांठ न पड़े। मनुष्य को इस प्रकार चलाया कि लड़ाई न हो। बालों को इस प्रकार सँवारो कि उलभन न बने। विधारा को इस प्रकार ढालो कि भिड़न न हो। तात्पर्य की भाषा में—आवेद और आक्रमण की नीति मन बरनो। उससे गांठ घुलती है युद्ध द्विज्जत है बाल उन्मत्त हैं और चिनगारियाँ उड़नी हैं।

भगवान् ने कहा—आप नीति के पीछे क्याय दृष्टिकोण और तटस्थ भाव नहीं होना इसलिए यह आप्रद, दुनय और एकान्त की नीति है। आपेय को छोड़ो मय उतर आणगा।

भगवान् ने कहा—एक ओर यह अखण्ड निरव की अविभक्त-सत्ता है और दूसरी ओर यह खण्ड का चरम रूप व्यक्ति है।

व्यक्ति का आरोप करीबानी सत्ता और सत्ता का आरोप करीबाला व्यक्ति—दोनों भङ्ग हुए हैं। सत्ता का एक व्यक्ति है। व्यक्ति की बिनाश शून्यता सत्ता है। सापेक्षा में दोनों का रूप निखर उठता है।

यह व्यक्ति और समष्टि का सापेक्ष नीति जैन-दान का मय है। इसके अनुसार समष्टि-सापेक्ष व्यक्ति और व्यक्ति-सापेक्ष समष्टि—दोनों सत्य हैं। समष्टि निरपेक्ष व्यक्ति और व्यक्ति निरपेक्ष समष्टि—दोनों मिथ्या हैं।

## व्यवहार-सत्य

नय-वाद अथवा सत्य की अपरिहार्य व्याख्या है। यह जितना दार्शनिक सत्य है उतना ही व्यवहार-सत्य है। हमारा जीवन वैयक्तिक भी है और सामुदायिक भी। इन दोनों कक्षाओं में नय की अहता है।

सापेक्ष नीति से व्यवहार में सामंजस्य आना है। उसका परिणाम है मैत्री गान्धि और व्यवस्था। निरपेक्ष नीति अचहेतना, निररकार और पृष्ठा पैदा करती है। परिवार, जाति, गाँव, राज्य, राष्ट्र और विश्व—यं क्रमिक विकासशील संगठन हैं। संगठन का अर्थ है सापेक्षता। सापेक्षता का नियम जो दो के लिए है, वही अन्तर्राष्ट्रीय जगत के लिए है।

एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की अचहेतना कर अपना प्रभुत्व साधता है वहाँ असमजसता खड़ी हो जाती है। उसका परिणाम है—कट्टा सपथ और अशान्ति।

निरपेक्षता के पाँच रूप बनते हैं —

- १—वैयक्तिक, २—जातीय, ३—सामाजिक, ४—राष्ट्रीय
- ५—अन्तर-राष्ट्रीय।

इनके परिणाम हैं—बग भद्र अलगाय, अत्यवस्था, सघन शक्ति क्षय  
गुद और अशांति ।

सापेक्षता के रूप भी पाँच हैं —

१—वैयक्तिक २—जानीय ३—सामाजिक ४—राष्ट्रीय  
५—मन्द राष्ट्राय ।

इनके परिणाम हैं—समता प्रमान जीवन सामीप्य व्यवस्था स्नेह  
शक्ति संवहन, मैत्री और शांति ।

## व्यक्ति और समुदाय

व्यक्ति अकेला ही नहीं आता : वह बंधन के बीज साथ लिए आता है। अपने हाथों उन्हें सींच विद्यालय वृक्ष बना लेता है। वही निकुच उसक लिए बंधन गृह बन जाता है। बंधन लादे जाते हैं, यह दिखाऊ सत्य है। दिखाऊ सत्य यह है कि बंधन स्वयं विकसित किए जाते हैं।

उन्हीं के द्वारा वैयक्तिकता समुदाय से जुड़कर सीमित हो जाती है। वैयक्तिकता और सामुदायिकता के बीच भेद रेखा खींचना सरल कार्य नहीं है। व्यक्ति व्यक्ति ही है। सब स्थितियों में वह व्यक्ति ही रहता है। जन्म मृत और अनुभूति का क्षेत्र व्यक्ति की वैयक्तिकता है। सामुदायिकता की यादवा पारस्परिकता के द्वारा ही की जा सकती है। दो या अनेक की जो पारस्परिकता है वही समुदाय है।

पारस्परिकता की सीमा से इधर जो कुछ भी है, वह वैयक्तिकता है। व्यक्ति का आन्तरिक क्षेत्र वैयक्तिक है, वह उससे जितना बाहर आता है उतना ही सामुदायिक बनता चलता है।

व्यक्ति को समाज निर्देश और समाज को व्यक्ति निर्देश

एकान्त पापक्यवादी नीति है। इससे दोनों की स्थिति असमजस बनती है।

समन्वयवादी नीति के अनुसार व्यक्ति और समाज की स्थिति सापेक्ष है। वही व्यक्ति गौण बनता है समाज मुख्य और वही समाज गौण बनता है और व्यक्ति मुख्य।

इस स्थिति में स्नेह का प्रादुर्भाव होता है। आचार्य अमृतचन्द्र ने इसे गदनी के रूपक में चित्रित किया है। मधन के समय एक हाथ आगे आता है दूसरा पीछे चला जाता है। दूसरा आगे आता है, पहला पीछे सरक जाता है। इस सारे में मुन्यामुख्य भाव से रोह मिलता है। एसाक आमह से खिचाव बढ़ता है।

## अन्तर्राष्ट्रीय-निरपेक्षता

बहुता और अल्पता व्यक्ति और समूह के एकान्तिक आग्रह पर असन्तुलन बढ़ना है सामन्तत्व की कड़ी टूट जानी है।

अधिकतम मनुष्योंका अधिकतम हित—यह जो सामाजिक उपयोगिता का सिद्धान्त है वह निरपेक्ष नीति पर आधारित है। इसी के आधार पर हिटलर ने यहूदियों पर मनमाना अत्याचार किया।

(बहु) मर्यादों के लिए (अल्प) सख्यकों तथा बड़ों के लिए छोटों के हितों का बलिदान करने के सिद्धान्त का औचित्य एकात्मवाद की दृष्टि से है।

सामन्तवादी युग में बड़ों के लिए छोटों के हितों का त्याग उचित माना जाता था। बन्धुसख्यकों के लिए अल्पसख्यकों तथा बड़े राष्ट्रों के लिए छोटे राष्ट्रों की उपेक्षा आज भी होती है। यह अशान्ति का हेतु बनता है। सामन्त नीति के अनुसार किसी के लिए भी किसी का अनिष्ट नहीं किया जा सकता।

बड़े राष्ट्र छोटे राष्ट्रों को नगण्य मान उन्हें आगे बाने का अवसर नहीं देते। इस निरपेक्ष-नीति की प्रतिक्रिया होती है। फलस्वरूप छोटे राष्ट्रों में बड़ों के प्रति अस्नेह भाव उत्पन्न हो जाता है। ये सगठित हो



उन्हें गिराने की सोचते हैं। पृष्ठा क प्रति पृष्ठा और तिरस्कार के प्रति तिरस्कार तीव्र हो उठता है।

अविकसित एशिया के प्रति विकसित राष्ट्रों की जो निरपेक्ष नीति रही, उसकी प्रतिक्रिया फूट रही है। एशियाई राष्ट्रों में पश्चिमी राष्ट्रों के प्रति जो दुराव है, यह उसीका परिणाम है। परिवर्तन के सिद्धान्त में विश्वास रखनेवाले राष्ट्र सम्मिल गए। उन्होंने अपने लिए उच्च सम्भावना का वातावरण बना लिया।

मिंटेन ने शास्त्रहीन भारत, बर्मा आर टंका का समय की मांग के साथ साथ स्वयंत्र कर निरपेक्ष ( अस्ति सर्वत्र धायवादी ) नीति को छोड़ा तो उसकी सापेक्ष नीति सफल रही।

फ्रांस ने भी भारत क युद्ध प्रदेश आर हाल्लण्ड ने जावा, गुमात्रा आदि को छोड़ा वह भी इसी कोटि का काय है। पुनर्गाल अब भी निरपेक्ष ( अस्ति सर्वत्र-धीयवादी ) नीति का लिए बैठा है और गाभा क प्रश्न पर अड़ा बैठा है। समय-भर्यादा के अनुसार निरपेक्ष नीति का निर्वाह हो सकता है किन्तु उसके भावी परिणामों से नहीं बचा जा सकता।

मंत्री की पृष्ठभूमि सत्य है वह प्रकृता और परिवर्तन दोनों क साथ जुड़ा हुआ है। अपरिवर्तन जितना सत्य है उतना ही सत्य है परिवर्तन। अपरिवर्तन को नहीं जानता वह चम्पुमान् नहीं है वैसे ही वह भी अचम्पुमान् है जो परिवर्तन को नहीं समझता।

वस्तुएँ बदलती हैं क्षेत्र बदलता है काल बदलता है, विचार बदलते हैं इनके साथ स्थितियाँ बदलती हैं। बदलत सत्य का जो पकड़ लेना है वह सामान्य की तुला में थड़ दूसरों का साथी बन जाता है।

समय-समय पर हुई राज्यक्रांतियों ने राज्यसत्ताओं को बदल डाला। राज्य की सीमाएँ बदलनी रही हैं। शासन-काल बदलता रहा है। शासन की पद्धतियाँ भी बदलनी रही हैं। इन परिवर्तनों का मूल्यांकन करनेवाले ही अज्ञानि को टाल सकते हैं। गाँधी, नेहरू और पटेल अखण्ड भारत के सिद्धान्त पर अड़े ही रहते जिन्ना की माग को स्वीकार नहीं करत तो सम्मेलन अज्ञानि उग्र रूप लेती। किन्तु उनकी सापेक्ष नीति ने बलु खेत्र, काल और परिस्थिति के मूल्यांकन द्वारा अज्ञानि को निर्धाय बना दिया।

## ऐकान्तिक आग्रह

भारत में राज्य पुनर्रचना को लेकर अभी अभी जो असंतुलन आया वह केवल आग्रही मनोवृत्ति का निदर्शन है। भारत की अखण्डता में निष्ठा रखनेवाले कामीर से कन्याकुमारी तक एक झुंके की सत्ता स्वीकार करीवाले प्रान्त-रचना जैसे छोटे प्रश्न पर उलझ गए। हिंसा को उभारने लग गए।

भारत सदैव व सघातक राज्य है। संविधान की तीसरी धारा के द्वारा पार्लियामेंट को यह अधिकार प्राप्त है कि वह विधि द्वारा राज्यों की सीमाओं में परिवर्तन कर सकेगी राज्य का क्षेत्र घटा बढ़ा सकेगी, नया राज्य बना सकेगी।

इस व्यवस्था के विरुद्ध जो आन्दोलन चला, वह परिवर्तन की मर्यादा को न समझने का परिणाम है। भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्र-निर्माण में जो तथ्य है, तथ्य केवल बड़ी नहीं है।

भाषा की विविधता में जा सांस्कृतिक एकतात्मकता है वह भी तो एक तथ्य है।

भेदात्मक प्रवृत्तियों के एकान्तिक आग्रह से अखण्डता का नाश होता है ।

अभेदात्मक शक्ति के एकान्त आग्रह से खण्ड की वास्तविकता और उपयोगिता का लोप होता है ।

राज्यों की आन्तरिक स्वतन्त्रता के कारण उन्हें अपनी पृथक् विशेषताओं को विकसित करने का अवसर मिलना है । सघ सखद होने के कारण उन्हें एक साथ मिठकर विकास करने का अवसर भी मिलना है ।

इस समन्वयवादी नीति में पृथक्ता में पलवन पानेवाले खान—य बीज का विनाश भी नहीं होता और सामुदायिक शक्ति और सुरक्षा के विकास का लाभ भी मिल जाता है ।

रिपस लोगों में अमन फ्रेंच और इटालियन—ये तीन भाषाएँ चतुर्थी हैं । इस विभिन्नता के उपरान्त भी वे एक कड़ी से जुड़े हुए हैं ।

सबग या सघात्मक राज्य में जो विभिन्नता और समता के समन्वय का अवसर मिलना है, वह प्रत्येक राज्य की पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता में नहीं मिल सकता ।

इन प्रकार हम देख सकते हैं कि यष्टि और समष्टि तथा अपरिषत्तन और परिषत्तन के समन्वय से व्यवहार का सामञ्जस्य और व्यवस्था का सन्तुलन होता है—वह इनके असमन्वय में नहीं होता ।

## समन्वय की दिशा में प्रगति

समन्वय का सिद्धान्त जैसे विश्व-व्यवस्था से सम्बद्ध है, वैसे ही व्यवहार व उपयोगिता से भी सम्बद्ध है। विश्व व्यवस्था में जो सहज सामंजस्य हैं उनका हेतु उसी में निहित है। यह है—प्रत्येक पदार्थ में विभिन्नता और समता का सहज समन्वय। यही कारण है कि सभी पदार्थ अपनी स्थिति में क्रियाशील रहते हैं। उपयोगिता के क्षेत्र में सहज समन्वय नहीं है इसलिए वहाँ सहज सामंजस्य भा नहीं है। असामंजस्य का कारण एकान्त बुद्धि और एकान्त बुद्धि का कारण पक्षपातपूर्ण बुद्धि है।

स्व और पर का भेद नीच होना है तटस्थ वृत्ति क्षीण हो जानी है हिंसा का मूल यही है।

अहिंसा की जड़ है मयस्थ वृत्ति—लाभ और अलाभ में वृत्तियाँ का सन्तुलन।

स्व के उत्कृष्ट में पर की हीनता का प्रतिबिम्ब होता है। पर के उत्कृष्ट में स्व की हीनता की अनुभूति होती है। ये दोनों ही एकान्तवाद हैं।

एक जाति या राष्ट्र दूसरी जाति या राष्ट्र पर हावी हुआ या होना है यह इसी एकान्तवाद की प्रतिच्छाया है।

पर के आगरण-काल में स्व के उत्पन्न का दाव उठाया जा सकता है। वहाँ दोनों मध्य रेखा पर आ जाते हैं। इनका अन्तर्गत बन जाता है।

आज की राजनीति सापेक्षता की दिशा में एक कदम आगे बढ़ा चाहिए—विश्व का मानस अनेकान्त का स्वरूप स्वीकार करना ही उदार रहा है।

स्व के प्रश्न पर शान्ति, सहभावना और समन्वय से विचार करने की जो गूँज है वह दुनियाँ के अन्तर्गत स्पष्ट सचेत है। यही घटना यदि सन् 1945 के अन्तर्गत परिणाम भयकर हुआ होता किन्तु यह नहीं है।

इस दाव का मानस समन्वय की रेखा ही अन्तर्गत है।

भगवान् महावीर का दार्शनिक दर्शन ही अन्तर्गत बन कर विकसित हो रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में पचशील की गूँज ही अन्तर्गत और पाँच सिद्धान्तों का समावेश ही अन्तर्गत समन्वय के प्रगति चिह्न है।

की

उत्तम  
है।

## पच शील

- १—एक दूसरे की प्रादेशिक या भांगोलिक अखण्डता एव साव  
भौमिकता का सम्मान ।
- २—अनाक्रमण ।
- ३—अन्य देशों के धरेलू मामलों में हस्तक्षेप न करना ।
- ४—समानता एव परस्पर लाभ ।
- ५—शांतिपूर्ण सह अस्तित्व ।

## दश सिद्धान्त

बाँटुग सम्मेलन द्वारा स्वीकृत दश सिद्धान्त ये हैं —

- १ मूल मानव अधिकारी और सयुक्त राष्ट्र उद्देश्य-पत्र के उद्देश्यों के  
प्रयोजनों और सिद्धान्तों के प्रति आदर ।
- २ सभी राष्ट्रों की प्रभु सत्ता और प्रादेशिक अखण्डता के लिए सम्मान ।
- ३ छोटे बड़े सभी राष्ट्र और जातियों की समानता का मान्यता ।
- ४ अन्य देशों के धरेलू मामलों में हस्तक्षेप न करना ।
- ५ सयुक्त-राष्ट्र उद्देश्य पत्र के अनुसार अकेले अथवा सामूहिक रूप से  
आत्म-रक्षा के प्रत्येक राष्ट्र के अधिकार के प्रति आदर ।

- ६ किसी भी बड़ी शक्ति के स्वायत्त की पूर्ति के लिए सामूहिक सुरक्षा के आयोजनों के उपयोग से भलग रहना एक देश का दूसरे देश पर दबाव न डालना ।
- ७ ऐसे कार्यों—आक्रमण अथवा बल प्रयोग की घमकियों से अलग रहना जो किसी देश की प्राकृतिक अस्तित्वा अथवा राजनीतिक स्वाधीनता के विध्वंस हों ।
- ८ सभी आन्तरिक मगई का शांतिपूर्ण उपायों से निपटारा करना ।
- ९ पारस्परिक हित एवं उपयोग को प्रोत्साहन देना ।
- १० 'याय और अन्तर्राष्ट्रीय दायित्वों के लिए सम्मान ।

१३ जन ५५ को नेहरू, सुगानिन के समुक्त बचस्प पर इस्लार हुए । उनमें पचशील का तीसरा विधान अधिक व्यापक रूप में मान्य हुआ है—'किसी भी राजनीतिक आधिक अथवा सैदानिक कारण से एक दूसरे के मामले में हस्तक्षेप न करना ।

इस राजनीतिक नयवाद की दार्शनिक नयवाद और सापेक्षवाद से तुलना कीजिये ।

- १ कोई भी वस्तु और वस्तु व्यवस्था स्वादाद या सापेक्षवाद की मर्यादा से बाहर नहीं है' ।
- २ दो विरोधी गुण एक वस्तु में एक साथ रह सकते हैं । उनमें सहानवस्थान ( एक साथ न टिक सके ) जैसा विरोध नहीं है' ।

१ आदीपमाध्योमसमस्वभाव स्वादादमुदानतिभिदि वस्तु ।

( स्वादाद मजरी ५ )

२ अस्तित्व नास्ति वन सह न विरुद्धयते । ( स्वादाद मजरी २४ )



- ३ जिनने घचन-प्रकार हैं उनने ही नय हैं ।
- ४ ये विशाल ज्ञानसागर के अंश हैं ।
- ५ ये अपनी अपनी सीमा में मग्न हैं ।
- ६ दूसरे पक्ष से सापेक्ष हैं तभी नय हैं ।
- ७ दूसरे पक्ष की सत्ता में हरनक्षेप, अवहेलना व आक्रमण करते हैं तब वे दुनय बन जाते हैं ।
- ८ सब नय परस्पर में विरोधी हैं—पूर्ण साम्य नहीं है किन्तु सापेक्ष हैं एक व की कड़ी में जुड़े हुए हैं इसलिए वे अविरोधी सत्य के साधक हैं । ( यथा सयुक्त-राष्ट्र सघ के निर्माण का यह आधार भूत सत्य नहीं है जहाँ विरोधी राष्ट्र भी एकत्रित होकर विरोध का परिहार करने का यत्न करते हैं । )

- १ जावद्या वयणाहा तावत्या चव ह्येति णयवाया ।  
( सन्मति प्रकरण ३।४७ )
- २ णिययक्षयणिममया मच्चनया परवियालणे मोहा ।  
( सन्मति प्रकरण १।२८ )
- ३ नाय वस्तु न चावस्तु वस्त्वरा कथ्यत सुधै ।  
नासमुद्र समुद्रो वा समुद्रांगो यथैव हि ॥  
( म्याद्वादरत्नाकरावतारिका ७।१ )
- ४ विपक्षापेक्षाणां कथयामि नयानां मुनयताम् ।  
( म्याद्वादरत्नाकरावतारिका ७।१ )
- ५ विपक्षक्षेत्राणां पुनरिह विभो ! दुष्ट नयताम् ।  
( म्याद्वादरत्नाकरावतारिका ७।१ )
- ६ सर्वे नया अपि विरोधमृतो मिथस्ते सम्भूय साधु समय मगवन् ।  
भवन्ते—( नय कणिका २२ )

- ९ एकान्त अविरोध और एकान्त विरोध से पदार्थ-व्यवस्था नहीं होनी । व्यवस्था की व्याख्या अविरोध और विरोध की सापेक्षता द्वारा की जा सकती है ।
- १० जितने एकान्तवाद या निरपेक्षवाद हैं वे सब दायोसे भरे पड़े हैं ।
- ११ वे परस्पर खिन्नी हैं—एक दूसरे का विनाश करनेवाले हैं ।
- १२ स्वादाद और नयवाद में अनाक्रमण अहस्ताप स्वमयादा का अनतिक्रमण, सापेक्षता—ये सामञ्जस्यकारक सिद्धान्त हैं ।  
इनका व्यावहारिक उपयोग भी असंतुलन को मिटानेवाला है ।

— ० ० —

---

१ एकान्तानित्ये एकान्तनित्ये च वस्तुनि व्यवहारो—व्यवस्था न घटत ( सूत्र कृत्वाङ्ग वृत्ति २५३ )

२ य एव दोषा किञ्च नित्यवादो, विनाशवादेऽपि समारत एव ।  
परस्परच्छिन्नेषु कष्टेषु जयत्यष्ट्ये जिन । शासनं ते ॥  
( स्वादाद मन्थरी २६ )

## साम्प्रदायिक सापेक्षता

धार्मिक क्षेत्र भी सम्प्रदाया की विविधता के कारण असमान्य व रंगभूमि बना हुआ है ।

सम्बन्ध का पहला प्रयाग वही होना चाहिए । सम्बन्ध का आधार ही अहिंसा है । अहिंसा ही धर्म है । धर्म का ध्वजक काटागु है—साम्प्रदायिक भावना ।

भावाधारी तुलसी द्वारा सन् १९१४ में सम्बद्ध में प्रस्तुत साम्प्रदायिक गमना के पाँच मूल्य वम अभिनिवेश के नियन्त्रण का सरल आधार प्रस्तुत करते हैं । वे इस प्रकार हैं —

१. सम्बन्धमक नीति बरनी जाय । अपनी मायना का प्रतिपादन निया जाय । दूसरों पर मौखिक या लिखित आ रूप न किये जाय ।
२. दूसरों के विचारों के प्रति सहिष्णुता रखी जाय ।
३. दूसरे सम्प्रदाय और उसके अनुयायियों के प्रति घृणा व निररकार की भावना का प्रचार न किया जाय ।
४. कोई सम्प्रदाय परिवर्तन करे तो उसके साथ सामाजिक सहिष्कार और अवैदनीय व्यवहार न किया जाय ।
५. धर्म के मौलिक तथ्य—अहिंसा सत्य अचौय अन्नचय और अपरिग्रह को जीवनव्यापी बनाने का सातूहिक प्रयत्न किया जाय ।

सामञ्जस्य का आधार मध्यम मार्ग ही हा सकता है ।

भेद और अभेद—ये हमारी स्वतंत्र चेतना, स्वतंत्र व्यक्तित्व और स्वतंत्र सत्ता के प्रतीक हैं । ये विरोध और अविरोध के साधन नहीं हैं । अविरोध का आधार यदि अभेद होगा तो भेद विरोध का आधार अवश्य बनेगा ।

अभेद और भेद—ये वस्तु या व्यक्ति के नैसर्गिक गुण हैं । इनकी महत्त्वमिति हा व्यक्ति या वस्तु हैं । इसलिए यह अविरोध या विरोध का साधन नहीं बनना चाहिए । भेद भी अविरोध का साधन बने—यही समन्वय से प्रतिफलित साधना का स्वरूप है । यही है अहिंसा, मध्यस्थ प्रवृत्ति, सतस्थ नीति या साम्य योग ।

जानि रग और बग के भेदों को लेकर जो सपन चल रहे हैं उनका आधार विषम मनोवृत्ति है । उसके बीज की उबर भूमि एकान्तवाद है । निरुद्धा एकाधिपत्य और अराजकता—ये दोनों ही एकान्तवाद हैं । काफी विचार लेख और मान्यता का नियंत्रण स्वतंत्र व्यक्तित्व का अपहरण है ।

अराजकता में समूचा जीवन ही खतरे में पड़ जाता है । सामञ्जस्य की रेखा इनके बीच में है ।

व्यक्ति अकेलेवन और समुदाय के मध्य-बिन्दु पर जीता है । इसलिए उसके सामान्य का आधार मध्यम मार्ग ही हो सकता है ।

## शान्ति और समन्वय

प्रत्येक व्यक्ति और समुदाय समाज गृहों के द्वारा ही शान्ति का अन्तर्गत व उपभाग कर सकता है। इसलिए दृष्टिकोण को वस्तु स्पर्शी बनाना उनके लिए परदान जैसा होता है।

पूरा मान्यता या रुढ़ि के कारण कुछ व्यक्ति या राष्ट्र स्थिति का यथावत् गून्व नहीं आंकते या आंकना नहीं चाहते—वे अतीतदर्शी हैं।

अतीत दर्शन के आधार पर वर्तमान ( प्रातु-युव-नय ) की अवहेलना करना निरपेक्ष नीति है। इसका परिणाम है असामञ्जस। इसके निश्चयन जनवादी चीन और उते मान्यता न देतेवाले राष्ट्र बन सकते हैं। वस्तु या गून्वांकन करत समय हमारा दृष्टिकोण एवम्भूत होना चाहिए। जो वर्तमान में चीन के भू भाग का शासक नहीं है वह उसका स्व सत्ता-सम्पन्न प्रभु कहे होगा? च्यांग का राष्ट्रवादी चीन और माओ का जनवादी चीन एक नहीं हैं। अवस्था भेद से नाम भेद जो होता है, वह गून्वांकन की महत्वपूर्ण दिशा ( समभि हृद नय ) है।

डलेस ने गोमा को पुतगाल का उपनिवेश कहा और खलबली मच गई।

इस अधिकार आगरण के युग में उपनिवेश का स्वर एवम्भूत दृष्टिकोण का परिचायक नहीं है ।

अमरीकी मजदूर नेता थी वाटर ह्यर के शब्दों में 'एशिया में अमरीका की विदेश नीति शक्ति और सैनिक गठ बंधनों पर आधारित है अवालाधिक है । अमेरिका न एशिया की सद्भावना को घुरी तरह से छोदिया है ।

गोवा के बारे में अमरीकी परराष्ट्र मंत्री थी डलेस ने जो कुछ कहा, इससे स्पष्ट है कि वे एशियाई भावना को नहीं समझते ।'

यह अमद्विध सत्य है—शक्ति प्रयोग निरपेक्षता की मनोवृत्ति का परिणाम है । निरपेक्षता से सद्भावना का धन्त और कटुता का विकास होता है । कटुता की परिसमाप्ति अहिंसा में निहित है । अज्ञान का भाव नोत्र होता है, समन्वय की बात नहीं सुफनी । समन्वय और अहिंसा अयो-याधित है । शान्ति से समन्वय और समन्वय से शान्ति होती है ।

— ० ० —

## अह-अस्तित्व की धारा

प्रभु सत्ता की दृष्टि से सब स्वतंत्र राष्ट्र समान हैं किन्तु सामर्थ्य की दृष्टिसे सब समान नहीं भी हैं। अमेरिका शस्त्र-बल और धन बल दोनों से समृद्ध है। रूस सैन्य बल और धन बल से समृद्ध है। चीन और भारत जन बल से समृद्ध हैं। त्रिनेन म्यापार बित्तार की कला से समृद्ध है। कुछ राष्ट्र प्राकृतिक साधनों से समृद्ध हैं। समृद्धि का कोई न कोई भाग सभी को मिला है। सामर्थ्य की विभिन्न कक्षाएँ बँटी हुई हैं। सब पर किसी एक की प्रभु सत्ता नहीं है। एक दूसरे ने पूरा साम्य और वैषम्य भी नहीं है। कुछ साम्य और कुछ वैषम्य संवर्धन भी कोई नहीं है। इसलिए कोई किसी को मिटा भी नहीं सकता और मिट भी नहीं सकता। वैषम्य को ही प्रगति मान जो दूसरे को मिटाने की सोचता है वह वैषम्यवादी नीति के एकान्तीकरण द्वारा असामंजस्य की स्थिति पैदा कर डालता है।

साम्य को ही एकमात्र प्रधान मानना भी साम्यवादी नीति का ऐकान्तिक आग्रह है। दोनों के ऐकान्तिक आग्रह का परिणाम स्वल्प ही मात्र शीत-युद्ध का बोलबाला है।

वैषम्य और साम्य दोनों विरोधी अवश्य हैं पर निरपेक्ष नहीं हैं ।  
दोनों सापेक्ष हैं और दोनों एक साथ टिक सकते हैं ।

विरोधी युगलों के सह-अस्तित्व का प्रतिपादन करते हुए भगवान् महाकीर ने कहा—निच्य अनित्य सामान्य असामान्य, वाच्य-अवाच्य सन् असत् जैसे विरोधी युगल एक साथ ही रहते हैं । जिस पदार्थ में कुछ गुणों की आस्तित्वा है उसमें कुछ की नास्तित्वा भी है । यह आस्तित्वा और नास्तित्वा एक ही पदार्थ के दो विरोधी किन्तु सह अवस्थित धर्म हैं ।

सहानुस्थान विद्व की विराट् व्यवस्था का अंग है । यह वैश्वे पदार्थाधिष्ठित है, वैश्वे हो व्यवहाराधिष्ठित है । इसी की प्रतिबिम्बि भारतीय प्रणाम-मन्त्री पण्डित नेहरू व पंचशील में है । साम्यवादी और जनतन्त्री राष्ट्र एक साथ भी सकते हैं—राजनीति के रंगमंच पर यह घोष बलशाली बन रहा है । यह समन्वय के दर्शन का जीवन व्यवहार में परनेवाला प्रतिबिम्ब है ।

वैयर्थ्यता जानीयता सामाधिकता, प्राप्तीयता और राष्ट्रीयता—ये निरपेक्ष रूप में बढ़त हैं तब असामञ्जस्य को लिए ही बढ़त हैं ।

व्यक्ति और सत्ता दोनों भिन्न ही हैं यह दोनों के सम्बन्धाकी अवहेलना है ।

यक्ति ही तत्त्व है—यह राज्य की प्रभुसत्ता का निरस्कार है । राज्य ही तत्त्व है—यह व्यक्ति की सत्ता का निरस्कार है । सरकार ही तत्त्व है—यह स्थायी तत्त्व-जनता का निरस्कार है । जहाँ निरस्कार है वहाँ निरपेक्षता है । जहाँ निरपेक्षता है वहाँ असत्य है । असत्य की भूमिका पर सह-अस्तित्व का सिद्धान्त पनप नहीं सकता ।



## सह-अस्तित्व का आधार—सयम

भगवान् ने कहा—मय का धन संजोकर सबक माध मैत्री साधो<sup>१</sup> ! सत्य के बिना मैत्री नहीं। मैत्री के बिना सह अस्तित्व का विकास नहीं।

सत्य का अर्थ है—सयम। गयम से वर विराध मिटना है, मैत्री विकास पाता है। सह अस्तित्व चमक उठता है। असयम से बैर बढ़ता है<sup>२</sup>। मैत्री का स्वर धीण हो जाता है। स्व क अस्तित्व और पर के नास्तित्व से वस्तु को स्तब्ध सत्ता बननी है। इसीलिए स्व और पर दोनों एक साथ रह सकते हैं।

अगर सहानुभूति व परस्पर-परिहार स्थिति जैसा विरोध व्यापक होता तो न स्व और पर ये दो मिलत और न सह अस्तित्व का प्रदम ही खड़ा होता। सह अस्तित्व का सिद्धान्त राजनयिकों ने भी समझा है।

१ सया सचण सपन्ने मरिा भूण्णु कप्पण ।

( सदा सन्धेन सम्मान मैत्रीं भूतेषु कल्पयेत् )

( सूत्रहस्ता १।१५।३ )

२ पयइड्ढं वरमसंजयस्स । ( प्रवधत वैरमसयनस्य )

( सूत्रहस्ता १।१।१७ )

राष्ट्रों के आपसी सम्बन्ध का आधार जो कूटनीति था, वह बदलने लगा है। उसका स्थान सह-अस्तित्व ने लिया है। अब समस्याओं का समाधान इसी को आधार मान खोजा जाने लगा है। किन्तु अभी एक मञ्च और पार करनी है।

दूसरों के स्वत्व को आमनातु करने की भावना त्यागे बिना सह-अस्तित्व का सिद्धान्त सफल नहीं होना। स्याद्वाद की भाषा में—स्वत्व की सत्ता जैसे पदाथ का गुण है वैसे ही दूसरे पदाथों की असत्ता भी उसका गुण है। स्वाभंग से सत्ता और पराभंग से असत्ता—ये दोनों गुण पदाथ की स्वतन्त्र-व्यवस्था के हेतु हैं। स्वाभंगया सत्ता जैसे पदाथ का गुण है, वैसे ही पराभंगया असत्ता उसका गुण नहीं होना नो हूँ न होना ही नहीं। द्वैत का आधार स्व-गुण सत्ता और पर-गुण असत्ता का सहावस्थान है।

सह-अस्तित्व में विरोध तभी माना है जब एक व्यक्ति जाति या राष्ट्र दूसरे व्यक्ति, जाति या राष्ट्र के स्वत्व को हकपजाना चाहते हैं। यह आक्रामक नीति ही सह-अस्तित्व की भाषा है। बरने से भिन्न वस्तु के स्वत्व का निर्णय करना सरल कार्य नहीं है। स्व के आरोप में एक विचित्र प्रकार का मानसिक मन्दाव हाता है। सह सत्य पर आवरण डाल देता है। मना शक्ति या अधिकार विस्तार का भावना क पीठे यही तन्व सक्रिय होता है।

## सह अस्तित्व का आधार—सयम

भगवान् ने कहा—सत्य का बल सजोकर सबने साथ मैत्री साधो<sup>१</sup> सय के बिना मैत्री नहीं। मैत्री के बिना सह अस्तित्व का विकास नहीं

सत्य का अर्थ है—सयम। सयम से वर विरोध मिटता है, मैत्री विकास पानी है। सह अस्तित्व चमक उठता है। असयम से बैर बढ़ता है<sup>२</sup>। मैत्री का स्वर क्षीण हो जाता है। स्व क अस्तित्व और पर अस्तित्व से वस्तु की स्वतंत्र सत्ता बनती है। इसीलिए स्व और पर दोनों एक साथ रह सकते हैं।

अगर सहानुभूति व परस्पर परिहार स्थिति जैसा विरोध व्याप्त होता तो न स्व और पर ये दो मिलते और न सह-अस्तित्व का प्रदत्त खड़ा होता। सह अस्तित्व का मिद्धान्त राननयिकों ने भी समझा है

१ सया सचण सपन्ने मेसि भण्णु कप्पा ।

( सदा सत्तेन सम्पन्न मैत्री भूतेषु कपयेत् )

( सुप्रवृत्ताङ्ग ११५।३ )

२ पवङ्गइ वरमसंजयस्स । ( प्रथमे वैरममयस्य )

( सुप्रवृत्ताङ्ग ११५।१७ )

रूप को छोड़ अपने रूप में सिद्धित जा रहे हैं। यह सामण्य की रेखा है।

कम विग्रह और अन्तर्राष्ट्रीय विग्रह की समाप्त रेखा भी यही है। इसके आधार पर कहा जा सकता है कि काम का विश्व व्यावहारिक समन्वय की दिशा में प्रगति कर रहा है।

## स्वत्व की मर्यादा

आन्तरिक क्षेत्र में व्यक्ति की अनुभूतियाँ व अन्तर का आलोक ही उसका स्व है।

बाहरी सम्बन्धों में स्व की मर्यादा जटिल बनती है। दूसरों के स्वत्व या अधिकारों का हरण स्व नहीं—यह अस्पष्ट नहीं है। सघन या अशान्ति का मूठ दूसरों के स्व का अपहरण ही है।

युग भावना के साथ साथ स्व की मर्यादा बदलती भी है। उसे समझने वाला मर्यादित हो जाता है। वह सघन की चिनगारी नहीं उड़ाता। रुढ़ि परक लोग स्व की शासन स्थिति से चिपके बैठे रहते हैं। वे अशान्ति पैदा करते हैं।

बाहरी सम्बन्धों में स्व की मर्यादा शाश्वत या स्थिर हो भी नहीं सकती। इसलिए भावना परिवर्तन के साथ साथ स्वयं को बदलना भी जरूरी हो जाता है। बाहर से घिरे हुए अधिकारों में आना शान्ति का सब प्रमाण सूत्र है। उसमें खतरा है ही नहीं। इन जन-जागरण के युग में उपनिवेशवाद सामन्तवाद और एकाधिकारवाद मिटने जा रहे हैं। विचारशील व्यक्ति और राष्ट्र दूसरों के स्वत्व से बने अपने विशाल

रूप को छोड़ अपने रूप में सिद्ध होते जा रहे हैं। यह सामंशिक की रेखा है।

बग विग्रह और अन्तर्राष्ट्रीय विग्रह की समापन रेखा भी यही है। इसके आधार पर कहा जा सकता है कि आज का विश्व व्यावहारिक समन्वय की दिशा में प्रगति कर रहा है।

— ० ० —

## निरूपण

शान्ति का आधार—व्यवस्था है ।

व्यवस्था का आधार—सह अस्तित्व है ।

सह अस्तित्व का आधार—समन्वय है ।

समन्वय का आधार—सत्य है ।

सत्य का आधार—अभय है ।

अभय का आधार—अहिंसा है ।

अहिंसा का आधार—अपरिग्रह है ।

अपरिग्रह का आधार—संयम है ।

असंयम से अपरिग्रह अपरिग्रह से हिंसा हिंसा से भय, भय से असत्य असत्य से सचप सचप से अधिकार हरण अधिकार-हरण से व्यवस्था, व्यवस्था से अज्ञान्ति होती है ।

विरोध का अर्थ विभिन्नता है किंतु सचप नहीं ।

१ मावभौम दर्शन—अमुक दृष्टिकोण से यह सही है—यह अस्तित्व की नीति है' ।

---

१—स्यात अस्ति एव ।

२ एकदेशीय या तटस्थ दृष्टिकोण—यह यू है—यह सापेक्ष नीति है ।

३ आग्रही दृष्टिकोण—यह यू ही है—यह निरपेक्ष नीति है ।

अपने या अपने प्रिय व्यक्तियों के लिए दूसरों के स्वत्व को हराने का यत्न करना पक्षपाती नीति है ।

आक्रामक को सहयोग देना—पक्षपाती नीति है । दूसरों की प्रभुसत्ता में हस्तक्षेप करना—पक्षपाती-नीति है । उनमें कुछ भी सामर्थ्य नहीं है ( नास्ति—सर्वत्र-वीरवाद ), यह एकान्तवाद है ।

हममें सब सामर्थ्य है—( अस्ति सर्वत्र-वीरवाद ) यह एकात्मवाद है । दूसरों के स्वत्व को अपना स्वत्व न बनाना सबम है । यही सह-अस्तित्व का आधार है ।

दूसरों के 'स्वत्व' पर अपना अधिकार करना असदम या आक्रमण है—पारस्परिक विरोध और ध्वंस का हेतु यही है ।

अपरिवर्तित सत्य की दृष्टि से परिवर्तन अवस्तु है, परिवर्तित-सत्य की दृष्टि से अपरिवर्तन अवस्तु है यह अपनी अपनी किरण—मर्यादा है किन्तु अपरिवर्तन और परिवर्तन दोनों निरपेक्ष नहीं हैं ।

अपरिवर्तन की दृष्टि से मूल्यांकन करते समय परिवर्तन गौण अवश्य होगा किन्तु उसे सबथा भूल ही नहीं जाना चाहिये ।

परिवर्तन की दृष्टि से मूल्यांकन करते समय अपरिवर्तन गौण अवश्य होगा किन्तु उसे सबथा भूल ही नहीं जाना चाहिए ।

१—सू ।

२—सदम ।



## नय सापेक्ष-दृष्टियाँ

## १ नैगम-नय

अभेद और भेद सापेक्ष हैं ।

केवल अभेद ही नहीं है कवल भेद ही नहीं है ।

अभेद और भेद मवथा स्वतन्त्र ही नहीं हैं ।

यह विश्व अखण्डता से किसी भी रूप में नहीं जुड़ा हुआ खण्ड और खण्ड से विहीन अखण्ड नहीं है । यह विश्व यदि अखण्ड ही होता, तो व्यवहार नहीं होता, उपयोगिता नहीं हानी, प्रयोजन नहीं हाना । अगर विश्व खण्डामक ही होता तो एतय नहीं होता । अस्तित्व की दृष्टि से यह विश्व अखण्ड भी है—प्रयोजन की दृष्टि से यह विश्व खण्ड भी है ।

## २ समग्र नय

भेद—सापेक्ष अभेद प्रधान दृष्टिकोण ।

वह यह यह वह सब एक हैं विश्व एक है अभिन्न है ।

## ३ व्यचहार नय

वह यह यह वह, सब भिन्न हैं विश्व अनेक रूप है, भिन्न है ।

## ४ श्रृजु सूत्र नय

भूत भविष्य सापेक्ष वर्तमान दृष्टि ।

जो बीत चुका है वह अकिञ्चित्तर है ।

जो नहीं आया वह भी अकिञ्चित्तर है ।

कायकर व है जो वर्तमान है ।

## ५ शब्द नय

भूत भविष्य और वर्तमान के शब्द भी भिन्न भिन्न हैं और उनके अर्थ भी भिन्न भिन्न हैं ।

स्त्री, पुल्ल और नपुंसक क वाचक शब्द भी भिन्न भिन्न हैं और उनके अर्थ भी भिन्न भिन्न हैं ।

### ६ समभिरुद्ध नय

जिन व्युत्पन्न शब्द हैं उनमें ही अर्थ हैं—एक शब्द दो वस्तुओं को अभिव्यक्त नहीं कर सकता ।

### ७ अयम्भूत नय

एक ही शब्द सदा एक वस्तु ही अभिव्यक्ति नहीं करता । क्रिया-कारीन वस्तु का वाचक शब्द क्रिया-कारण गूण वस्तु को अभिव्यक्त नहीं कर सकता ।

### दुर्नय निरपेक्ष-दृष्टियाँ

१ व्यक्ति और समुदाय दोनों मन्वय भिन्न ही हैं—यह वस्तु व्यक्ति का निरस्कार है । ऐकात्मिक प्राथम्यवादी नीति ( नैगम नयाभास ) है ।

२ समुदाय ही मन्वय है—यह व्यक्ति का निरस्कार है । ऐकात्मिक समुदायवादी नीति ( सग्रह नयाभास ) है ।

३ व्यक्ति ही मन्वय है—यह समुदाय का निरस्कार है । ऐकात्मिक-व्यक्तिवादी नीति ( व्यवहार नयाभास ) है ।

४ वर्तमान ही मन्वय है—यह अतीत और भविष्य अपरिवर्तन या एकता का निरस्कार है । ऐकात्मिक परिवर्तनवादी नीति ( पर्यायार्थिक नयाभास ) है ।

५ लिङ्ग भेद ही मन्वय है—यह भी एकता का निरस्कार है ।

६ उत्पत्ति भेद ही मन्वय है—यह भी एकता का निरस्कार है ।

७ क्रियाकारण ही मन्वय है—यह भी एकता का निरस्कार है ।